मनुष्य बनो

अप्रैल
१९९१

5/91

शुभ संकल्प,

क्षमा,

प्रेम,

निष्काम कर्म,

ब्रह्म

पालन,

'मनुष्य बनो' के नियम

१—शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिकता के नियमों का वास्तविक दृष्टिकोण से प्रचार करना और प्रेम, सभ्यता, आदर, शिष्टाचार, सदाचार, सहनशीलता और संयम की शिक्षा देना इसका मुख्य उद्देश्य है मनुष्य बनना और बनाना।

२—सन्त महात्माओं और ऋषियों की वाणी को सरल, सुबोध और साधारण भाषा में प्रचार करना।

३—सामाजिक उन्नति कारक तथा देशहित कारक लेखों को भी स्थान दिया जायेगा।

४—किसी धर्म पन्थ या सम्प्रदाय के खण्डन सम्बन्धी लेख नहीं छापे जायेंगे।

५—यह पत्र प्रत्येक मास की १५ तारीख को प्रकाशित हुआ करेगा।

६—लेखों के घटाने बढ़ाने और छापने न छापने का अधिकार सम्पादक को होगा। लेख सम्पादक के नाम भेजे जांय।

७—ग्राहकों को पत्र लिखते समय ग्राहक नम्बर व पता साफ-साफ अवश्य लिखना चाहिए। उत्तर के लिये जवाबीकार्ड आना चाहिए वी० पी०पी० से पत्रिका नहीं भेजी जायेगी। इसका वार्षिक मूल्य २०.०० है।

८—यदि किसी मास का पत्र ठीक समय पर न पहुंचे तो पहले अपने यहाँ डाकखाने से पूछताछ करके वहां से जो उत्तर न मिले व अगला अंक निकलने के एक सप्ताह पूर्व तक कार्यालय में पहुंचने पर ही दूसरी प्रति बिना मूल्य भेजी जा सकेगी।

९—प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र, ग्राहक होने की सूचना, मनीआर्डर आदि मैनेजर के नाम से भेजनी चाहिए। मनीआर्डर कूपन पर अपना पता साफ-साफ लिखना चाहिए। और पते की तबदीली भी।

—प्रकाशक

R. S.

ओ३म पूर्णमद पूर्णमिदं: पूर्णात्पूर्णमदुच्यते
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णं मेवावशिष्यते ॥

मनुष्य बनो

वर्ष ४०	अप्रैल १९९१	अङ्क ७

गाफिल शब्दावली से—

शब्द

राधास्वामी नाम लिया अब, राधास्वामी धाम भी लो।
धर्म लिया और अर्थ लिया, मोक्ष लिया अब काम भी लो।१।

चौरासी का चक्कर लगाकर, घूमे फिरे मारे-मारे।
मानुष जन्म मिला अब तुमको सत्लोक विश्राम भी लो।२।

उम्र गुजर गई पूजा करते, मत्थे रगड़े शीश नवाये।
अब तो सुरत चढ़ा कर ऊपर, देवों से प्रणाम भी लो।३।

गीत सुने बाहरी कानों से, अन्तर के दरवाजे बन्द।
दसवें द्वार चल कर अब तो, अंतर का इल्हाम भी लो।४।

हरुफों का तो जाप किया, हरुपों ने कहीं पहुचाया ना।
धुन पकड़ाये भरम मिटाये, ऐसे गुरु से नाम भी लो।५।

बिन जिव्हा के नाम जो जपते, बिना कान के धुन सुनते।
बिन आँखों जो दर्शन करते, उनसे असल मुकाम भी लो।६।

स्वाँसों स्वाँस जो सुमिरन होता, ऐसी युक्ति को ढूढों।
धनुष बाण बिन रावण मारे, 'गाफिल' ऐसा राम भी लो।७।

मासिक सन्देश

परमदयाल सद्गुरू हजूर मानव दयाल

(डा० ईश्वरचन्द्र शर्मा जी महाराज)

मेरी अपनी ही आत्मा के अंश

मेरे परम प्रिय सत्संगियों !

राधास्वामी, परम दयाल जी सहाई ।

पिछले मासिक सन्देश में समय और स्थान की कमी के कारण मैं सन्तमत के तीन सोपानों के सम्बन्ध में सद्गुरु के स्वरूप की चर्चा नहीं कर सका। 'गुरु' शब्द का अर्थ बहुत गहरा है । सनातन धर्म में और सन्तमत में गुरु की महिमा स्थान-स्थान पर गाई गयी है । इससे पहले कि मैं आपको ज्ञान दाता गुरु और सतज्ञान दाता सद्गुरु के सम्बन्ध में, सरल शब्दों में समझाऊं, मैं गुरु शब्द के अलग अलग अर्थों की चर्चा करना चाहता हूं। गुरु का एक अर्थ वह परमतत्व, सर्वशक्तिमान, सर्वज्ञ परमेश्वर है जिसे अनेक नामों से पुकारा जाता है । उसके चार पहलू हैं इस जगत में उस ईश्वर या परमेश्वर के तीन पहलू ब्रह्मा, विष्णु और शिव कहलाते हैं। सन्तों ने ब्रह्मा को विराट, विष्णु को अव्याकृत और शिव को हिरण्यगर्भ कहा है । (सोने का अण्डा) । विराट या स्थूल जगत् को हम इन तीनों पहलुओं से परे परमतत्व या परब्रह्ममालिक का शरीर कह सकते हैं। विष्णु को हम उसी का ब्रह्माडी मन कह सकते हैं. और शिव को उसी का कारण शरीर एवं बीज रूपी आत्मा कह सकते हैं ।

स्थूल जगत् में हमारी पृथ्वी, सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध,

बृहस्पति, शुक्र, शनि आदि ग्रह, सौर मण्डल, करोड़ों सौर मण्डलों से परिपूर्ण आकाश गँगा और असंख्य आकाश गंगाओं से परिपूर्ण ब्रह्माण्ड आदि सम्मिलित हैं। सनातन धर्म और सन्त मत की ब्रह्माण्ड की यह व्याख्या आजकल के नक्षत्र विज्ञान से मेल खाती है। आश्चर्य की बात यह है कि स्थूल सृष्टि के बारे में यह सच्चा ज्ञान ऋषियों और सन्तों ने बिना किसी यन्त्रों की सहायता के प्राप्त किया। आज का विज्ञान आकाश गंगाओं को बड़े बड़े यन्त्रों और बड़ी-बड़ी दूरबीनों से देखकर वही सच्चाई बयान कर रहा है, जिसको ऋषियों और सन्तों ने अपनी योग साधना के द्वारा देखकर वर्णन किया।

दूसरे धर्मों में जगत् की धारणा इतनी व्यापक नहीं है। उनकी सृष्टि की व्याख्यायें सिर्फ कल्पना पर आधारित है। और विज्ञान के सत्य से टकराती है। परिश्रमो धर्मों के आधार पर यह सृष्टि केवल छः सात हजार वर्ष पहले ही बनाई गई थी और केवल इस पृथ्वी को ही जीवों का घर माना गया है। हमारे ऋषियों ने इस सृष्टि को अनादि और अनन्त माना है। उनकी सृष्टि की स्थिति के बारे में और प्रलय के बारे में जो धारणाय हैं, वह विज्ञान से मेल खाती है। ब्रह्मा का एक दिन अरबों, खरबों और संखों वर्षो को गणना में बताया जाता है। उसे कल्प भी कहा जाता है। कई कल्पान्तरों के बाद प्रलय होती है। आजकल के गणित शास्त्री और ज्योति विज्ञान के विशेषज्ञ इन ऋषियों के दृष्टिकोण से सहमत हैं। यही कारण है कि वैज्ञानिक खोजों के बावजूद सनातन धर्म और सन्तमत सत्य प्रमाणित हो रहा है। हमने कोटि-कोटि ब्रह्माण्डों को माना है। इसी प्रकार हमने छोटे से छोटे द्रव्य के कण को एवं अणु को भी स्वीकार किया है।

छोटे से छोटा और बड़े से बड़ा

भी है। इसलिये उसे ऋषियों ने महतोमहियान अणोहअणियान अर्थात् बड़े से बड़ा और छोटे से छोटा कहा है। क्योंकि परम तत्व का यह पहलू उसकी सृजन शक्ति की व्यापकता बतलाता है, इसलिये उसे सर्वशक्तिमान कहा गया है। दूसरे शब्दों में उसकी सृजन शक्ति स्थूल रूप में जड़ और चेतन में मौजूद है।

उसी परमतत्व का जगत् में व्याप्त दूसरा पहलू ब्रह्माण्डी मन एवं सर्वव्यापी चेतना है, जो सारे जगत का पालन-पोषण करती है और उसकी स्थिति को बनाये रखती हैं, इसलिये विष्णु को जगत का पालनकर्ता कहा जाता है। आज का विज्ञान भी इस बात को मान रहा है कि भौतिक स्थूल जगत् को सूक्ष्म चेतन तत्व ही उसका आधारभूत बनकर उसका पालन करता है। इसी ब्रह्माण्डी मन की शक्ति को Cosmic Ray अथवा ब्रह्मांडी किरण कहा गया है। जड़ और चेतन में व्याप्त इसी शक्ति के कारण ही ईश्वर को सर्वज्ञ कहा जाता है।

ईश्वर का तीसरा पहलू जिसे शिव कहा गया है, उसका बीज रूप प्रकाशमय ब्रह्मांडी आत्मा है। यह प्रकाश पराप्रकाश है, जिसमें से ब्रह्माण्डी मन और विष्णु उत्पन्न होता है और ब्रह्माडी शरीर समेत विलीन हो जाता है। जिस प्रकार ब्रह्मा एवं विराट उसका स्थूल शरीर कहा जाता है और ब्रह्मांडी मन एवं विष्णु उसका सूक्ष्म शरीर कहलाता है, उसी प्रकार ब्रह्माण्डी आत्मा एवं शिव को उसका 'कारण शरीर' कहा जाता है। विराट का लक्षण स्थूल तत्व एव भौतिक सत् है। ब्रह्माण्डी मन एवं विष्णु का लक्षण चित्त है, ब्रह्मान्डी आत्मा एवं शिव का लक्षण आनन्द है। जगत के इसी सत्, चित्, आनन्द को जगत् में व्याप्त सच्चिदानन्द परमात्मा कहा

है किन्तु इस सच्चिदानन्द का विश्व से परे आधार वह बिन्दु है जिसे इन तीनों को धारण करने वाला, इन तीनों को पैदा करने वाला और इन तीनों को अपने में विलीन करने वाला परमपुरुष, सत्पुरुष आदि कहा जाता है। इसी को पूर्ण पुरुष भी कहा गया है। इसके विश्वातीत लक्षण अलख, अगम, अनामी और दयाल है। सभी मत-मतान्तरों ने और ऋषियों ने इसी चर्तुमुखी सच्चिदानन्द परम पुरुष की बार बार सराहना की है। इस सराहना के तीन मंगलाचरण इस प्रकार हैं—

गुरु ब्रह्मा गुरु विष्णु, गुरु देवो महेश्वरः
गुरु साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरुवे नमः।
गुरु देव जगत् व्याप्तम
गुरो परमतरम्
ओंकार बिन्दु संयुक्तम
मोक्ष

पहले मंगलाचरण का अर्थ यह है कि गुरु सर्वव्यापक, शक्तिमान ब्रह्मा की भाँति रचना करने वाला है और शरीर-धारी मनुष्य रूप में अवतरित गुरु शिष्य का पुर्ननिर्माण करता है, उसके भौतिक व्यक्तित्व को नया बना देता है। इसलिये उसे सर्व शक्तिमान, सर्व समर्थ मालिक कहा जाता है। गुरु को विष्णु रूप कहने का अर्थ यह है कि वह शिष्य के मन को ऐसा पावन और पवित्र बना देता है कि उसमें पराप्रेम के कारण सर्वज्ञता का लक्षण पैदा हो जाता है और वह चिनमय अर्थात् चित्त से ओत प्रोत हो जाता है। शरीरधारी चिनमय गुरु को इस कला को सर्वज्ञता कहा गया हैं। इसी प्रकार गुरू को महेश्वर कहने का अर्थ यही है कि वह शिष्य के शारीरिक

देता है। यही आनन्द वास्तव में उसके प्रकाश की सर्वव्यापकता है। इसलिये गुरु को सर्वव्यापक शिव कहा गया है। क्योंकि यह तीनों जगत् में व्याप्त पहलू उसी मालिक के व्यक्त रूप है एवं साक्षात् रूप हैं, जिसे परब्रह्म कहा जाता है। इसलिये इस मंगलाचरण में शरीरधारी ज्ञानदाता गुरु को साक्षात् परब्रह्म कहा गया है।

दूसरे मंगलाचरण में भी उस गुरु को नमस्कार किया गया है जो इस जगत् में सर्वशक्तिमान ब्रह्म, सर्वज्ञ विष्णु और सर्व-व्यापक दैवी रूप शिव में प्रगट होता हुआ, उस परात्पर ब्रह्म का रूप भी है जिसे सत्पुरुष एवं परम पुरुष कहा जाता है। इस नमस्कार का लक्ष्य भी मनुष्य के चोले में अवतरित ज्ञान वाला गुरु है।

तीसरे मंचलाचरण में उस ओंकार की व्याख्या है जिसे निर्गुण उपासक योगी सर्वशक्तिमान अकारात्मक ब्रह्म तत्व, सर्वज्ञ उकारात्मक विष्णु तत्व सर्वव्यापक मकारात्मक शिव तत्व और इन तीनों का आधार परमतत्व बिन्दु मानकर एवं अ उ म और बिन्दु (ॐ) कहकर उसका ध्यान लगाते हैं और उसे नमस्कार करते हैं। इस मंगलाचरण में यह भी बताया गया है कि चार पहलुओं वाला ॐ परमतत्व का वह नाम हैं जो मनुष्य की कामनाओं को पूर्ण करता है और उसे मोक्ष की पूर्णता भी देता है। यह गुरु तत्व की वह व्याख्या है जिसके सम्बन्ध में यह कहा जाता है कि गुरु जगत् में व्याप्त भी है और जगत् से परे भी है। जब व्यक्ति को यह अनुभव हो जाता है कि गुरु आंशिक रूप से जड़ चेतन में मौजूद है और पूर्ण रूप से वही गुरु अलख, अगम और अनामी दयाल है, जो सर्वाधार है तो वह शरीरधारी अवतरित गुरु को केवल मनुष्य

अर्पित कर देता है। इस सद्गुरु के बारे में अगले मासिक संदेश में चर्चा जारी रखी जायेगी।

जहाँ तक सत्संग दौरे का सम्बन्ध है, मैंने आपको पिछले मासिक सन्देश में बताया था कि हम १३ दिसम्बर को होशियारपुर पहुंच गये। मानवता मन्दिर में १६ दिसम्बर के मासिक सत्संग के लिये बहुत से सत्संगी पहले से ही पहुंच गये थे। इसलिये १४ और १५ दिसम्बर के सत्संग भी अधिक संख्या के लिये लाभदायक सिद्ध हुआ। शनिवार की रात्रि का सत्संग हर महीने की भाँति बहुत प्रभावशाली रहा। बटाला के सत्संगियों ने रविवार को हर महीने की भाँति प्रातःकाल के नाश्ते की सेवा की। मैं यह बात यहां पर इसलिये दोहरा रहा हूँ, क्योंकि मास्टर कुलदीप शर्मा के नेतृत्व में जब बटाला और उस इलाके के आस पास के सत्संगी नाश्ता लेकर सबसे पहले प्रातःकाल मेरे पास आते हैं तो उनके चेहरे एक विशेष तेज से चमक रहे होते हैं। उनकी सेवा की यह भावना वास्तव में सच्ची भक्ति और सच्चे प्यार का आधार है। वास्तव में वह ईश्वर, जिसे ब्रह्मा, विष्णु और शिव कहा जाता है, मनुष्य में शरीर, मन और आत्मा का साक्षात् रूप है। इसलिये यदि कोई ईश्वर की सेवा करनी चाहिए तो उसे मनुष्य की सेवा करनी चाहिए। इसी सच्चाई को बताते हुए दातादयाल जी महाराज ने कहा है :—

अब आदमी कुछ और हमारी नजर में है।
जब से सुना है यार लिबासे बशर में है॥

इसलिए परमदयाल जी महाराज ने अपने केन्द्र को कोई और नाम न देकर मानवता मन्दिर का नाम दिया है और मासिक पत्रिका को मानव मन्दिर कहा है। इस जगत में मनुष्य ईश्वर का साक्षात् जीता जागता रूप है। मनुष्य ही

इस जगत में देवताओं से अधिक श्रेष्ठ है, क्योंकि वह अपने आप में पूर्ण है। उसकी पूर्णता को निखारने के लिये ही मानवता मन्दिर की केन्द्र बनाया गया है। इसलिये वटाला के सत्संगियों की यह सेवा वास्तव में ईश्वर की सेवा है। इस जगत में मनुष्य ही ईश्वर का जीता जागता स्वरूप है नरदेही को भवसागर से तरने की किश्ती कहा गया है। दातादयाल जी महाराज ने बहुत ही सरल भाषा में कहा है :—

नर देही भवसागर तरनी, दया से हाथ में आयी।
जो को इसका सार न जाना, विरथा जनम गंवाई ॥

नर देही का सार यही है कि मनुष्य शरीर से मानव मात्र की सेवा करे। मन से शिव संकल्प के आधार पर व्यवहार करे और प्रकाश रूपी आत्मा को हरएक प्राणी के अन्दर मौजूद समझकर सभी से प्यार करे। जो व्यक्ति इस प्रकार की सेवा करता है, उसी की साधना सफल होती है।

दिसम्बर के महीने में मुख्यतः मानवता मन्दिर में दैनिक और साप्ताहिक सत्संग चलता रहा। कुछ दिनों अत्यन्त सर्दी के कारण मेरा स्वास्थ्य ठीक न रहा। इन्हीं दिनों साम्प्रदायिक दंगों के कारण देश की स्थिति गम्भीर हो गयी। पहले के नियत प्रोग्राम के अनुसार मुझे १३ जनवरी १९९१ को नागपुर के रास्ते दक्षिण के दौरे पर जाना था और ३० तारीख को वापसी थी, किन्तु उपरोक्त अनिवार्य परिस्थितियों के कारण यह विचार किया गया कि दक्षिण का दौरा रद्द कर दिया जाये। किन्तु मैंने ये उचित न समझा। यह एक दुःख की बात है कि ऋषियों और सन्तों की भूमि भारत में उसी मालिक के नाम पर जो सर्वाधार है और जो विशुद्ध प्रेम के रूप में हर-एक मनुष्य के रूप में विराजमान है, मानव, मानव से अज्ञानवश नफरत कर रहा है। किसी धर्म में यह नहीं कहा गया कि

एक व्यक्ति दूसरे से इसलिये घृणा करे कि उसकी पूजा का तरीका अलग है। ईश्वर किसी भी धर्म, सम्प्रदाय, समाज अथवा राष्ट्र की निजी सम्पत्ति नहीं है। वह सबका, सबमें, सबसे न्यारा है। उसका कोई रूप नहीं और सभी रूप उसी के हैं। इसी सच्चाई को दातादयाल जी ने और परमदयाल जी अनुभव के आधार पर साबित कर दिया है। मेरे अनुभवों का भी यही निचोड़ है। सत्य तो यह है कि प्रेम ही इस जगत की सृष्टि का कारण है और प्रेम ही इसका आधार है, प्रेम ही मनुष्य को सर्वाधार दयाल पुरुष से मिलाता है। सभी साधन, सभी योग मनुष्य को प्रेम की उस ऊँची सीढ़ी पर पहुंचाते है जहां पर सभी भेदभाव मिट जाते है। दुःख की बात तो यह है कि इस पराप्रेम के सन्देश को धर्म के अनुयाइयों ने ठुकरा दिया है। इस्लाम धर्म के प्रवर्तक हजरत मोहम्मद ने हीरा पर्वत की कन्दरा में खुदा का नूर एवं प्रकाश देखा, उसका शब्द और कलाम सुना, इसके बाद उन्होंने ईश्वर की एकता के आधार पर भ्रात्री भाव का प्रचार किया।

उन्होंने ईश्वर के प्रति सच्चे मुसलमानों को पाँच बार वह प्रार्थना अथवा नमाज दोहराने का आदेश दिया, जिसमें ईश्वर को परमदयाल और जगत का मालिक माना गया हैं, किसी एक फिरके या धर्म की धरोहर नहीं। वह कलमा शरीफ अथवा प्रार्थना मन्त्र इस प्रकार है :—

लाइला इल्लिल्लाह मोहम्मद उल रसूलिल्लाह,
रहमानुल रहीम रब उल आलमीन ॥

जिसका अर्थ यह है "हम उसी परमात्मा के आगे सिर झुकाते हैं, जो देवताओं से परे एकमात्र ईश्वर है (उपनिषद के अनुसार इसी सत्य को एकोब्रह्म द्वितीयो नास्ति अर्थात परम- ... है ... कोई नहीं) जिसको प्राप्त करने के लिये

मोहम्मद गुरु बनकर आया है, जो परमदयाल है और ब्रह्मांडों का स्वामी एवं मालिक है।" यहां पर यह बात ध्यान देने योग्य है कि हजरत मोहम्मद ने यह नहीं कहा कि ईश्वर मुसलमानों का मालिक है। अगर ऐसा कहा होता तो कुरान शरीफ में "रब्बुल आलमीन" के स्थान पर 'रब्बुल मुसलमीन" लिखा गया होता। किन्तु सत्य तो यह है कि इस्लाम धर्म पर चलने वालों को बिन में पाँच बार याद दिलाया जाता है कि ईश्वर किसी सम्प्रदाय मात्र का न होकर ब्रह्माण्डों का मालिक है। हजरत मोहम्मद ने यह भी लिखा है कि सच्चा मुसलमान वह है जो सभी ईश्वरीय धर्मों का आदर करता है। जो ऐसा नहीं करता मोमिन एवं सच्चा मुसलमान नहीं है।

जहाँ तक किसी एक स्थान पर खुदा या ईश्वर को सीमित मानने का सवाल है, इस्लाम इसका विरोध करता है। सारी कायनात कोटि-कोटि ब्रह्माण्ड जो ईश्वर या खुदा के अधीन चल रहे हैं, सभी इस्लाम हैं। इस्लाम का अर्थ सर्वव्यापक, सर्वाधार, परमदयाल, परमपुरुष मालिकेकुल की शरणागत हो जाना है। जहाँ पर जानमाज (अर्थात नमाज पढ़ने का आसन) बिछाया वही खुदा का घर हो गया अर्थात मस्जिद हो गया। इस्लाम की कट्टरता बाद की उपज है। वास्तव में यदि एक मुसलमान सच्चा मुसलमान हो जाये, हिन्दू सच्चा रामभक्त हो जाये, इसाई ईसा का सच्चा अनुयाई हो जाये, यहूदी सच्चा यहूदी बौद्ध सच्चा बौद्ध जैनी सच्चा जैन और सिक्ख सच्चा सिक्ख हो लाये तो भेदभाव तनिक मात्र भी नहीं रह सकता। इसी विचार से मैंने अस्वस्थ होते हुए भी दक्षिण का दौरा कौन्सिल नहीं किया। हम १३ जनवरी को होशियारपुर से रवाना होकर, १४ जनवरी को दहली से ए. पी, एक्सप्रेस से

चलकर १५ जनवरी को बलारशाह स्टेशन पर पहुंच गये, जहाँ पर 'अहेरी अन्तर्राष्ट्रीय मानवता परिषद' के अधिकारियों ने हमारा स्वागत किया। कुछ समय के लिये हम चन्द्रपुर में एक राधास्वामी परिवार के घर पर ठहर कर सायंकाल ५ बजे अहेरी के लिये रवाना हो गये। जब हम अहेरी नगर से करीब दो किलोमीटर की दूरी पर पहुचे, तो हर साल की भांति श्रद्धा और प्रेम में ओत-प्रोत सैकड़ों सत्संगियों ने बाजों-गाजों समेत हमारा स्वागत किया और जलूस के रूप मे शहर के विभिन्न भागों से गुजरते हुए और स्थान-स्थान पर पूजा और आरती करते हुए सत्संगस्थल पर हमारे साथ पहुचे। 'अन्तर्राष्ट्रीय मानवता परिषद' अहेरी का प्रबन्ध हमेशा बहुत ही सुन्दर होता है। कालिज और स्कूल की छात्राओं क द्वारा जो स्वागत गान गाया जाता है, वह अत्यन्त आत्मस्पर्शी और सच्चे प्रेम का नमूना है। हमने इस बार इस स्वागत गान का विशेष कैसिट बनवाया है, जिसमें अहेरी के सत्संगियों द्वारा गाई गई आरती भी रिकार्ड की गई। संगीत का यह सुन्दर धाराप्रवाह अहेरी परिषद के जनरल सैकेटरी विलास के छोटे भाई के कारण है जो वहाँ पर अध्यापक हैं। हम सम्भवतया इस कैसिट को सभी केन्द्रों पर भेजेंगे। १५ जनवरी की रात्रि को केवल विश्राम किया गया, किन्तु बहुत से सत्संगी मिलने के लिये आते रहे।

१६ और १७ जनवरी को प्रातः व सायं विशाल सत्संग आयोजित हुए, जिनमें अहेरी और बाहर से आये हुए सत्संगियों के अलावा अहेरी राजघराने के बाबा धर्मराव, जो महाराष्ट्र धारा सभा के सदस्य चुने गये हैं और महाराजा विश्वेश्वरराव भी सम्मिलित हुए। इन प्रभावशाली सत्संगों के अलावा इस

बार भी स्थानी विज्ञान महाविद्यालय में और उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों ने भी सत्संग आयोजित किये गये। महाराजा विश्वेश्वर राव की अध्यक्षता में विज्ञान महाविद्यालय का सत्संग विशेषकर प्रभावशाली रहा। क्योंकि इस बार मैंने अंग्रेजी भाषा में सत्संग न देकर हिन्दी भाषा में ही इस विषय पर सत्संग दिया कि भारतीय धर्म किस प्रकार विश्व शान्ति स्थापित करने में योगदान दे सकता है। कुछ प्रश्नों का उत्तर देने के बाद यह सत्संग सम्पन्न हुआ। उच्चतर माध्यमिक महाविद्यालय में केवल अध्यापकों को ही सत्संग दिया गया।

१८ जनवरी के प्रातःकाल के आशीर्वाद के सत्संग के बाद और दुपहर का भोजन कपके हम चन्द्रपुर के लिये रवाना हो गये वहाँ पर रात्रि के विश्राम के पश्चात दूसरे दिन प्रातःकाल हम श्री भगवान व्यास द्वारा चालित 'तेज पुन्ज' कार के द्वारा आरमुर निजामाबाद के लिये रवाना हो गये। वहाँ पर सायंकाल के विशाल सत्संग के बाद हम निजामाबाद श्री ओमप्रकाश तिवारी के घर पर पहुँचे। मैंने कई बार मासिक सन्देश में आपको बताया है कि निजामाबाद का तिवारी परिवार पूरी तरह से शरणागत है। ओमप्रकाश के पितामह और उनके चाचा वहाँ पर हमारी प्रतीक्षा कर रहे थे क्योंकि उन्हें किसी दूसरे शहर में विवाहोत्सव में शामिल होने के लिये जाना था। निजामाबाद के प्रेमी सत्संगी परिवार विशेषकर श्रीमती डा० ज्योत्ना शर्मा और श्रीमती मन्जुला शर्मा का परिवार रात्रि के ग्यारह बजे तक हमारे साथ रहा। दूसरे दिन प्रातःकाल हम तेजपुन्ज स्वचालित रथ के द्वारा करीमनगर पहुंचे। यहाँ पर श्री रामकोट रेड्डी के मकान पर

सत्संग आयोजित हुआ, जिसमें करीमनगर के बहुत से सत्संगी सम्मिलित हुए। श्री रामकोट रेड्डी हमेशा परमदयाल जी के आगमन पर आन्ध्र प्रदेश के दौरे पर २४ घण्टे उनकी सेवा में रहते थे। मेरे साथ भी हमेशा रात-दिन आन्ध्र प्रदेश के दौरे पर सेवा में रहते हैं। उसी दिन हम दक्षिण काशी वेमलवाड़ा भी गये और वहाँ पर एक सत्संग दिया। सायंकाल करीमनगर से होते हुए हम रात्रि के दस बजे राधास्वामी जनरल सत्संग राजपूत बाड़ी केन्द्र हनमकुण्डा में पहुंच गये। इस मासिक सन्देश के लिये यहां तक के दौरे की सूचना पर्याप्त है। मेरे परम प्रिय आत्मसंगियों ! मेरे अपने ही अंश ! मैं आपको इस महीने की सद्भावना और आशीर्वाद भेजता हूँ और आपके जीवन के लिये मंगल कामना करता हुआ आशा करता हूँ कि आपकी भक्ति सफल रहे।

सबको राधास्वामी !

आपका फकीरमय
मानव

—×—

गताँक का शेष

फिर उसी समुद्र की ओर जा रहे हैं। नदी नाले और पानी की एक-२ बूंद समुद्र हो होना चाहती है, क्योंकि वह समुद्र ही से निकले थे। समुद्र के पूर्णता का सस्कार स्वाभाविक रूप से उनमें मौजूद है और स्वभाव के कारण वह सबके सब उसी ओर रुख किये हुए चले जा रहे हैं, ताकि उसके वक्षस्थल में अपने आपको लयकर दें कमी और सीमितपना मिट जाय और असली आनन्द जो उसका रूप है, सबको प्राप्त हो जाय। उपनिषद का कथन है–'यद् तव हृदयम् सम तदस्तु हृदयम तव।"

"तेरा हृदय मेरा हृदय बन जाये।' "मैं तुझ जैसा हो रहूँ।', यह सबकी प्रबल इच्छा रहती है।

वचन १०१

वही इष्ट पद है

उपनिषद की वाणी है :—

'वही पूर्ण अवस्था है।' 'वही पूर्ण धन है।' 'वही पूर्ण लोक है।' 'वही पूर्ण आनन्द।' 'वही पूर्ण ज्ञान है।' 'वही पूर्ण जीवन है।' 'वही पूर्ण अनुभव है।' 'वही पूर्ण ध्रुवपद, पूर्ण निर्वाण और पूर्ण सद्गति है।'

अगर हम उसकी इच्छा न करें तो फिर किसकी इच्छा करें! और यह हमारी इच्छा और किससे पूरी होगी? जहाँ देखो उसी इच्छा का दृश्य दिखायी दे रहा है। जिसको सुनो यही गीत गा रहा है। भाषा अलग-अलग है। राग और सुर में में व अलाप में भिन्नता है. परन्तु अभिप्राय सबका एक है। उसी के लिये यह सब कुछ किया जा रहा है। दुःख सहते हैं, कष्ट उठाते हैं। एक अवस्था से दूसरी अवस्था में बदलते रहते हैं। बचपन, जवानी और बुढ़ापे के कष्ट, कर्म, उपासना और ज्ञान के पुण्य कर्म, हाकिमों के कोप, गुरुओं की उपाधि, वेद

और शास्त्रों का पढ़ना, ईश्वर और ब्रह्म की उपासना, जीविका उपार्जन, लिखना और पढ़ना सब उसी के लिये तो है। लोग जानते नहीं, समझते नहीं, भ्रम के शिकार होते है जो वस्तु कि सुगम है कठिन हो रही है।

गुरु के पास जाने से इसकी समझ आती है और जहाँ यह समझ आ गई फिर क्या है! काम आसान हो जाता है। और बाह्य दृश्यों को देखते हुए भी हमारा चित्त अपने निज रूप की ओर आकर्षित हो जाता है। जिसकी खोज में हम बाहर भटकते रहते हैं, उसे अपने ही अन्दर पाते हैं। अगर वह हम में न होता तो फिर उसका मिलना असम्भव था। वह हम में और हमारे अन्दर है। इस कारण से हम उसे पाते हैं और उसे पाकर सदा के लिये तृप्त हो जाते हैं। यह गुरु की कृपा है।

परमसन्त कबीर साहब की महा अनुभवी वाणी है :—

जेहि कारण भुइ बहु फिरे, घूमे देश विदेस।
पिया मिलन जब होइया, आँगन भया बिदेस ॥१॥
पिंजर प्रेम प्रकासिया, प्रगटी जोत अनन्त।
संशय छूटा सुख भया, मिला पियारा कंत ॥२॥
झलक लगी जोगी हुआ, मिट गई ऐ चातान।
उलट समाना आप में, अब भया ब्रह्म समान ॥३॥
हिम से पानी हो गया, पानी भी हुआ भाप।
जो पहले था सो भया, प्रगटा आप ही आप ॥४॥
आया था संसार में देखन जग का रूप।
सन्त समागम सों पड़ा, अजर अलेख अरूप ॥५॥

—×—

वचन १०३

जाओ गुरु की संगत में

जाओ गुरु की संगत में। गलती न करो। गुरु बिना गत

न जैसी मति नहीं। इस विषय में हम अधिक क्या कहें कबीर साहब ही की वाणी का सहारा लेते हैं। इस शब्द में बिजली जैसा प्रभाव है जो हृदय में विशेष प्रकार का प्रभाव उत्पन्न करता है। उनका कथन है :—

गुरु मिले सीतल भया, मिटी मोह मन ताप।
निसि बासर सुख निधि लहूँ, अन्तर प्रगटे आप ॥१॥
तत[1] पाया तन बीसरा मन धाया धर ध्यान।
तपन बुझी व तताप की, सुन्न किया अस्थान ॥२॥
गगन मंडल के बीच में, बिना कमल का छाप।
पुरुष अनामी रम रहा नहीं मन्त्र नहीं जाप ॥३॥
पवन नहीं पानी नहीं, नहि धरती आकाश।
तहाँ कबीरा सन्त जन, साहब पास खबास ॥४॥
हम बासी उस देस के, जहँ बारह मास विलास।
प्रेम झिरे विगसे कँवल, तेज पुंज परकास ॥५॥
उलट समाना आप में, प्रगटी जोत अनन्त।
साहब सेवक एक संग, खेलें सदा बसन्त ॥६॥
संसय करू न मैं डरूं, सब दुख दिये निवार।
सहज सुन्न में घर किया, पाया नाम अधार ॥७॥
बिन पाँवों का पंथ है, बिन बस्ती का देस।
बिना देह का पुरुष है, कहें कबीर संदेस ॥८॥
घट में है सूझे नहीं, कर सों गहा न जाय।
मिला रहै और न मिलै, तासों कहा बसाय ॥९॥
कबीर हम जब गावते, तब गुरु जाना नाहिं।
अब गुरु दिल में देखते, गाने को कुछ नाहिं ॥१०॥

यह गुरु के धारण करने का प्रयोजन है। इसके सिवा और कोई प्रयोजन नहीं है।

(१) तत्व।

।। मनुष्य बनो ।।

सत पुरुष राधास्वामी की वाणी है।

गुरु करो खोज कर भाई, बिन गुरु कोई राह न पाई ।।१।।
जग डूबा भव जल थारा । कोई मिला न काढ़नहारा ।।२।।
जग पंडित भेष विचारे। क्या जोगी, ज्ञानी हारे ।।३।।
सन्तन से प्रीति न धारी। क्यों उतरें भव जल पारी ।।४।।
सब तीर्थ व्रत पचेरे। पढ़ विद्या मान भरेरे ।।५।।
भक्ती रस नेक न पाया। भक्तों की शरण न आया ।।६।।
भक्ती का भेद न जाना। गुरु को सत् पुरुष न माना ।।७।।
गुरु सबको पार लगावें। जो जो उन चरण धियावें ।।८।।
गुरु से तू बेमुख फिरता। मन के नित सन्मुख रहता ।।९।।
कर्मों से पचता खपता। नर देही बाद गंवाता ।।१०।।
अब चेतो समझो भाई। कर प्रीति गुरु संग नाई ।।२२।।
कह कर राधास्वामी गाई। करनी कर मिले बड़ाई ।।२३।।

अब तक तीन बातें बताई गयीं। यह पहली बात है कि अध्ययन निरीक्षण और अनुभव से अपनी जानकारी को बढ़ाओ। दूसरी बात यह है कि गुरू की संगत में जाकर उनके वचन सुनो, और सत्संग के वचनों के द्वारा अपनी जानकारी को सम तुल्य बनाने की योग्यता प्राप्त करो, और तीसरी बात यह है कि गुरू को धारण करो।

यहां तक तो बाहरी बातों से सम्बन्ध है। यह बाह्य विधि है। अब आगे के वचनों में अन्तर मुखी विधि का उपाय बताया जायेगा।

यदि यहाँ तक समझ लिया तो आगे का विषय समझ में आयेगा, और अगर इसे नहीं समझा है तो फिर उसका समझना बहुत कठिन है।

।। चतुर्थ भाग समाप्त ।।

प्रवचन

(बम्बई १४-१ ६६)

परमसंत दयाल फकीरचन्द्र जी महाराज

देखो मित्रो ! मैं बम्बई आया। तुम कुछ सत्संगी दिल्ली से टेपरिकार्ड लेकर के आये हो। मैं सोचता हूँ :—

मरेंगे मर जायेंगे कोई न लेगा नाम।

क्या तुमने पाखंड का जाल बनाया है ? गुरू बन गया, उपदेश देता है। लोग मत्था टेकते है। सेवा करते हैं। फिर मैं अपने से पूछता हूँ कि तू कौन है ? कहां से आया है ? किसने तुझे बनाया है।

सुनो मित्रो ! हम संसार में पैदा होते हैं, संसार देखते हैं हम को ख्याल आता है कि संसार का बनाने वाला कोई है। मैं भी संसार में आया। ख्याल आया कि ईश्वर कोई है। परमात्मा कोई है। उसके मिलने की उत्कण्ठा ने दिमाग में प्रवेश किया। हिन्दू था, ब्राह्मण के घर में जन्म लिया था। राम, कृष्ण, शिव आदि की पूजा करता रहा। चूंकि एक धुन थी कि मालिक को मानव रूप में देखूं। एक संस्कार रामायण और भागवत से मिला था कि वह अवतार लेता है। इस कारण वर्षों तक प्रबल इच्छा करता रहा कि वह मालिक मानव रूप में मिल जाय। मेरा एक दृश्य था जो मुझको दातादयाल (महर्षि शिव) के चरणों में ले गया। उस पवित्र विभूति ने मुझको उस असली मालिक से मिलने के लिये यह नाम दान (नाम की दीक्षा) दिया था। मेरा जीवन नाम जपते हुए बीत गया। चूंकि राधास्वामी मत की पुस्तकों में, कबीर की पुस्तकों में सब धर्मों का खण्डन था—वेदान्त भी अधूरा, सगुन उपासक भी अधूरा और सब को काल और माया के

अन्तरगत रखा हुआ था, चित्त में एक भावना थी कि उस राम को मिलूं, जिसका जिक्र यह सन्त करते हैं न कि वहाँ कृष्ण पहुंचा, न राम वहाँ पहुंचा, न पाराशर न वशिष्ठ और न मुहम्मद वहाँ पहुंचा। क्या मैं हक नहीं रखता था इस बात को खोज करने के लिये या इस बात को जानने के लिये कि सच्चा राम क्या है ?। मेरे दातादयाल (महर्षि शिव ने मुझ पर अहसान किया जिसको मैं जीवन भर शरीर की सुधि रहते भूल नहीं सकता। उन्होंने मुझे यह गुरू पदवी देकर मुझको असली और सच्चे राम का भेद तथा पता दिया।

वह भेद कैसे पता लगा ? तुम में से दहली से यह भूपसिंह आया हुआ है। इसने ८-६ वर्ष बाद अपनी घटना सुनाई कि यह मरने लगा था कुतुबमीनार से गिरकर, डूबने लगा था जमुना में। अन्त में बिजली को छूकर मरने लगा। उस समय मेरा रूप प्रकट हुआ। वह मेरा रूप कहता है जाग ! जाग !! कृषक (श्री गोपीलाल, अलीगढ़ निबासी) या और दूसरे ल खों सत्संगी हैं जो यह कहते हैं कि मेरा रूप स्वप्न में या अभ्यास में प्रकट होता है तथा अफ्रीका या अमरीका में प्रकट होता है, मरते समय ले जाता हैं तथा पत्र दे जाता है आदि २। चूंकि मैं नहीं होता हू और न मुझे कोई इसकी जानकारी होती है ती मैं विवश हो गया यह समझने के लिये कि जिसको मैं राम मानकर पूजता था गुरू मानकर पूजता था अथवा जिस रग या रूप को पूजता था और मेरे अन्तर प्रगट होता था वह मेरा अपना ही बनाया हुआ था। वह मेरा अपना ही विश्वास सिद्ध हुआ क्योंकि मैं दूसरों के अन्तर नही जाता हूँ। दूसरे महात्मा जाते होंगे मुझे पता नहीं। दातादयाल गये होंगे, स्वामी जी महाराज गये होंगे मगर सचमुच यह भी नहीं गये होंगे। मैं अपनी बात जानता हूँ कि मैं नहीं जाता। उन्होंने पर्दा रक्खा,

मान लिया, धन दौलत इकट्ठो कीं। मैं निर्भय होकर संसार को कहे जाता हूँ कि यदि हिन्दू फिलोस्फी ठीक है और आवागमन का चक्र और कर्म का फल किसी को मिलता है तो ऐसे महात्माओं जिन्होंने इस बात का पर्दा रखकर अपना मान लिया, धन इकट्ठा किया, गुरू बनकर संसार में खेले, अपनी गद्दियाँ बनायीं, डेरे बनाये, अपने धाम बनाये केवल इस ख्याल को पद में रखकर तो इनका क्या परिणाम हुआ, मैं नहीं जानता। मैं तो डरता हूँ।

तुम लोग मेरे साथ आये। मुझे आपके मान की आवश्यकता नहीं है। आपसे धन की आवश्यकता नहीं। मेरा जीवन बदल गया है। कोई आरजू (इच्छा) बाकी नहीं।

आरजू है तो यह है कि कोई आरजू न हो।
मैं को मिटा दूं साथ में इसमें कि तू न हो।।
खिरका न हो जिस्म पर,न सिर पर शाही ताज।
मुझको अब अपनी जात को भी जुस्तजू न हो।।

आप लोग आये। मेरे वचन रैकार्ड करते हैं और दूसरों को सुनाते हैं। दूसरों को सुनाने की बजाय मेरा भाषण तुम स्वयं सुनो। दूसरों को उपदेश देने से फंस जाओगे। जो व्यक्ति दूसरों को उपदेश करता रहता है और स्वयं अमल (आचरण) नहीं करता वह पार नहीं कहा जा सकता। जिस तरह मल्लाह लोगों को नाव में बिठाकर पार करता रहता है, यात्री तो दूर देशों को चले जाते है मगर उसका चक्र उस नदी पर लगता रहता है। वह किसी दूसरे देश नहीं जाता। वह तो नाव में ही रहेगा। इसी तरह शेरी समझ में यह आया है कि हम (गुरु) लोगों को उपदेश देते है अपने मन्दिरों, मठों तथा डेरों के लिये अथवा गुरु बनने के लिये, यह पार नहीं जा सकते।

मैंने यह कार्य क्यों किया ? सन् १९०५ ई० में जब मैं राधास्वामी मत में आया था उसकी वाणियाँ सुनी थी कि सब ही अधूरे रह गये । कौन आदमी है जो अपने पुरुखों की बुराई सुन सकता है । मैं पाराशर ऋषि की सन्तान हूँ, स्वामी जी ने तो लिख दिया कि पाराशर भूल गया आदि आदि । तो मैंने प्रण किया था कि मैं इस रास्ते पर चलूंगा और जो कुछ मेरी समझ में आयेगा, संसार को बता जाऊँगा । पता नहीं दातादयाल (महर्षि शिव) ने मेरे ही इस कर्म को काटने को यह काम दिया हो । मैं तो यह समझता हूं कि मुझको इस बात को समझाने के लिये कि इनमें से कोई भी इस अन्तिम अवस्था पर नहीं पहुचा, मुझे यह काम दिया गया था । फिर वह अवस्था क्या है ? आज कबीर की वाणी सुनाता हूँ कि वह अवस्था क्या है ?

मन और सुरत

तू सूरत नैन निहार, यह अंड के पारा है ।
तू हिरदे सोच विचार, यह देश हमारा है ॥

कबीर कह गये, राधास्वामी दयाल कह गये कि भई ! वह अण्ड से परे है । अण्ड किसे कहते हैं ? मन को । एक पिंड, एक अण्ड, एक ब्रह्माँड । वह कह गये कि वह मन से परे है । मेरी समझ में यह नहीं आता था कि वह अण्ड से परे कैसे हैं । मैंने तो उसको जितना पूजा अपने मन से ही पूजा । मैंने क्या समस्त धर्म, सम्प्रदाय वालों ने मन से ही पूजा की । यदि किसी ने मालिक का कोई रूप बनाया तो वह उसके मन ने बनाया । वह तो मालिक नहीं था । आदमी ने उसको रूप देकर उसको पूजा । फिर इस अण्ड से मुझको किसने निकाला ? आप लोगों ने निकाला । भूपसिंह ने, कृषक (श्री

गोपीलाल) तथा कमालपुर वाली माई ने निकाला। दूसरे सत्संगी जिनके अन्तर मेरा रूप प्रकट होता है, उनको दवा बताता है, मरते समय ले जाता है, उन्होंने निकाला। देखो आनन्ददयाल ! तुम लोग आते हो मैं तुम लोगों से किसी वस्तु को आस नहीं रखता। क्यों ? क्योंकि मेरे जीवन ने यह मान लिया और जीवन के अनुभव ने सिद्ध किया कि यह लेना देना पिछले जन्म के कर्मों के अनुसार है। जिससे मैंने लेना है उससे ले लेना है। जिसने मुझसे लेना है मुझसे ले लेना है ।। इस एक ख्याल ने मुझे संसार की आशाओं से बरी कर दिया।

जो यह कहते हैं कि किसी ने उसको अपने आँखों से बाहर में या अन्तर में देखा या जो कहते हैं कि उन्होंने भगवान की आवाज अन्तर में सुनी, तो जिस तरह भूपसिंह के अन्तर में आवाज आई जाग ! जाग !! जाग भई जाग !!! यह आवाज देने वाला मैं तो था नहीं। कौन था ? उसका अपना ही मन था। कोई और नहीं था। जब कोई आदमी इस अण्डे से निकलेगा तो वह अंडे से निकलने के बाद उस मालिक को कौन अनुभव करेगा ? सुरत। सुरत कभी रूप नहीं बनाती, रूप सदा मन बनाता है। सुरत केवल खेंचती है। उसको तवज्जह जाती है। सुरत में कोई शक्ति है, तो खेंचने की है। एक ओर से दूसरी ओर जाने की है। जब मन रूप बनायेगा तो उस समय सुरत मन के साथ होगी जो रूप बनायेगा। मन के बीच में सुरत रहेगी मगर रूप जब बनायेगा मन बनायेगा। जब मन आता है तो सुरत तो जाती है मगर मन का (Cover) खोल लिये हुए होती है। सुरत रूप नहीं बना सकती उसमें खिचाव होता है। वह मन के साथ खिचेगी। खिचने का नाम है आनन्द। तुम आनन्द की अवस्था में रूप नहीं बना सकते।

सुरत की भक्ति का नाम है लय होना (समाधिष्ट होना)। इसलिये वह कहते हैं :—

तू सूरत नैन निहार, यह अण्ड के पारा है।

सुरत का नैन फिर क्या हुआ ? खिचाव, आकर्षण। मैं तुमको देख रहा हूँ। यहाँ से इस ओर देखने में मैंने कोई रूप तो नहीं बनाया। सुरत केवल एक ओर से हटकर दूसरी ओर चली गई। सुरत का मन तथा रूप रंग और रेखाओं की ओर से हट जाना ही सुरत के नैन से देखना है। आगे कहते हैं :—

तू हिरदे सोच विचार, यह देश हमारा है।

रूप रंग रेखाओं को छोड़ कर जिस ओर को सुरत जाती है हमारा देश है। कहने को तो कह जाऊंगा मगर समझेगा कौन ? केवल जिसकी सुरत इन रूप रंगों को छोड़कर उस ओर ध्यान करेगी जिस ओर रूप रंग रेखायें नहीं है। यदि सुरत उन रूप रंगों को छोड़कर दूसरे रूप रंगों को देखेगी तो वह सुरत है मगर उसके साथ मन है। जब तक किसी की सुरत रूप रंग रेखाओं को छोड़कर अरूप अरंग की ओर नहीं जायेगी, तब तक वह अपने देश या घर या अपने आदि को प्राप्त नहीं कर सकती। सोच लो ! मास्टर मोहनलाल कितना कठिन काम है। इस अवस्था का कोई अधिकारी है ? दातादयाल कहा करते थे :—

कठिन नाम है कठिन काम है कठिन फकीर कमाई।
जग के भौ दुख नासें पल में, जब कोई फकीर जग आई॥

इसलिये मैं वह फकीर हूँ कि जो मेरी संगत करे, मेरी बात को समझे वह इस भव के जाल से निकल सकता है।

पहले ध्यान गुरु को धारो।
सुरत निरत में पवन चितारो॥

वह कहते हैं पहले गुरु का ध्यान करो। एक तो हम लोग अन्तर में गुरु का ध्यान करते हैं मगर यदि किसी को बाहर में पूर्ण गुरु नहीं मिला हुआ है वह लाख कोशिश करे, अन्तर में गुरु के रूप का दर्शन कठिन है। गुरु अन्तर में प्रगट तो हो जायेगा, मगर वह रूप जो है वह तुम्हारे मन का है। वह जो रूप तुम्हारे अन्तर में प्रकट होता है वह तुमको वहाँ (उस अवस्था) का इशारा नहीं दे सकता। यहाँ कबीर का कथन है :—

सुहेलना धुन में नाम उचारो।
तब सतगुरु लहा दीदारा है ।।

वह सतगुरु कौन है जिसका दीदार या दर्शन वहां होता है। दुनियाँ अनजान है, भूली हुई है उस सतगुरु का रूप जो कबीर की शर्त को पूरा करे। सुलेहना धुनि में नाम जपने के बाद सतगुरु प्रकट होता है। वह कौन सतगुरु है? 'आपा' कहता हूं तो तुम लोग भूला हुआ कहोगे। वह तुम्हारी अपनी ही सुरत है। कोई दूसरा गुरु वहाँ नहीं है न बाबा फकीर, न बाबा सावनसिंह, न कोई और! वह तुम्हारा निज स्वरूप है। दाता दयाल का शब्द है :—

घट में दर्शन पाओगे, संदेह कुछ इसमें नहीं।
मैं तो घट में हुं तुम्हारे, ढूंढ लो मुझको वहीं ।।
शब्द सुनते हो मेरा, चित्त की वृत्ति तान कर।
सुरत मेरा रूप हैं, इसको समझ लेना वहीं ।।

वहां का संकेत कोई करेगा तो वह बाहर का पूर्ण गुरु करेगा यदि किसी को मिल जाय, जिस तरह पूर्ण पुरुष महर्षि (शिव जी ने ऊपर के शब्द में प्रकट किया है।

जो रूप गुरु का या राम का या कृष्ण का अपने मस्तिष्क

में कोई बनाता है वह रूप तुमको, तुम्हारी सुरत को अन्तर में उस अवस्था की ओर,जो रूप रंग रेखा से न्यारी है, इशारा नहीं कर सकता। इशारा जो कोई करेगा, बाहर का पूर्ण गुरु करेगा। बाहर का गुरु तुमको यह ज्ञान देगा मगर बाहर के पूर्ण गुरु की पहिचान भी कठिन है। अच्छा यदि किसी को मिल भी जाय जैसा मुझको मिला तो यह मन रूप और रेख यें इतनी प्रबल है कि यह अपने चंगुल से सुरत को निकालने नहीं देती। इसलिये इस ऊंची शिक्षा को सन्तों ने गुप्त रक्खा और मुझे भी रखना चाहिए था क्योंकि जब तक मनुष्य को पहले मन को एकाग्र करने, सूक्ष्म बनाने तथा मन को वश में करने का साधन नहीं मिला हैं वह आगे नहीं जा सकेगा। इसलिये मैं नाम नहीं देता। यह मेरा कर्त्तव्य नहीं है। यह साधुओं की डयूटी है तथा भक्तों की डयूटी है जो जीवों को उनके मन के चक्रों से सूक्ष्म बना दें। चूंकि तुम्हारी पहिली सीढ़ी (Stage) का साधन पूरा नहीं है, इसलिये लिखा है :—

पहिले ध्यान गुरु का धारो।
सुरत निरत मन पवन चितारो ॥
सुहेलना धुन में नाम उचारो।
तब सतगुरु लहो दीदारा है ॥

पहिले सबको यह साधन करने पड़ते हैं—सुमिरन, ध्यान, त्रिकुटी, सुन्न, महासुन्न। जब तक यह नहीं लगाओगे, तुम आगे जा नहीं सकते। इसलिये सन्तों का मार्ग सर्व साधारण लोगों के लिये नहीं है। जो लोग साधक होते हैं महापुरुष उनको काम दे देते हैं, ताकि इस काम से वह आप भी मन की गढ़न करते रहें। मेरे विचार में यदि करोड़ों गद्दिया बन जाँय तो मुझे कोई खेद नहीं है। बड़ी खुशी की बात है। गद्दियों

के बिना तो काम ही नहीं चलता। एक ही आदमी से सारी दुनियाँ कैसे शिक्षा प्राप्त कर सकती है! करोड़ों आदमी हैं बात करने तक का अवसर नहीं मिलता। उनसे समझने का अवसर नही मिल पाता। इसलिये कोई यह न समझे कि मैं गद्दियों या इन साधुओं के विरुद्ध हूँ। मेरे भाव को लोग समझते नहीं। जब प्रारिम्भिक सीढ़ियाँ हो जाती है। ध्यान जमने लगता है, मन एकाग्र होने लगता है, सुरत पूरी पूरी अपने आप में ठहर जाती है, जिसको कहते है :—

तू सुरत नैन निहार, यह अण्ड के पारा है।
तू हिरदे सोच विचार, यह देश हमारा है॥
पहिले ध्यान गुरु का धारो, सुरत निरत मन पवन चितारो
सुलेहना धुनि में नाम उचारो, तब सतगुरु लहो दीदारा है।
सतगुरु दरस होय जब भाई, वे दें तुमको नाम चिताई।
सुरत शब्द दोऊ भेद बताई, तब देखे अण्ड के पारा है॥

जब मन स्थिर हो जाता है तब बाहर का गुरु तुमको भेद दे देता है। आनन्द दयाल! तुम आते हो यह ठीक है। वर्षों से हमारा तुम्हारा सम्पर्क रहा है। पिछले जन्मों का सम्बन्ध होगा। मेरी इच्छा है कि जितने आदमी मेरी संगत में आये हैं उनको रहस्य बता जाऊँ भेद बता जाऊं कि सचाई क्या है, ताकि जीवन भर तुम बाबे फकीर की ही ढपली न बजाते रहो। जिस ध्येय के लिये तुम बाबे फकीर के साथ लगे हो वह तुम्हारा ध्येय पूरा हो जाय।

वह ध्येय क्या है। तुमको भेद मिल जाय। गुरु के साथ सम्बन्ध पैदा करने का उद्देश्य क्या है? यही कि तुमको रहस्य ज्ञात हो जाय कि असलियत क्या है। यही कबीर ने कहा है। यही स्वामी जी ने कहा है। मैं जो सत्संग कराता हूँ केवल भेद बताने के लिये कराता हूँ। लोगों को अपने दायरे

या मण्डल में बाँधने के लिये नहीं कराता। एक दृष्टिकोण से दूसरे गुरु आम लोगों के लिये लाभदायक भी हैं। क्योंकि वह दुनियाँ मे फंसे हुए जीवों को दुनियां से निकालकर गुरु के जाल में फंसाते हैं या सम्प्रदाय के जाल में फंसाते हैं। जो फंसा हुआ है, (चाहे वह दुनियाँ में फंसा हुआ है, चाहे धर्म या डेरे में फंसा हुआ है अथवा किसी गुरु के जाल में फंसा हुआ है) उससे निकालने के उददेश्य से या इस नीयत से कि उसके बन्ध कट जायें, मैं सत्संग कराता हूँ। वह बंध मेरे निकट, जहाँ दुनियां का जाल है वहाँ पथ, धर्म और गुरु का भी जाल है। मैं निर्बन्ध पुरुष हूँ, बीतराग हूँ, मायातीत हूं, आप्त पुरुष हूँ। च्‌कि मैं बन्धन से छुड़ाना चाहता हूँ इसलिये वह विधि नाम-दान की जो आज दिन तक प्रचलित है और शायद रहेगी भी जिससे जीव एक बन्धन से छूट कर दूसरे बन्धन में आयें, वह प्रयोग नहीं करता। बाहर के गुरु से सम्बन्ध पैदा करने का जो उद्देश्य मैंने ऊपर बताया है यही कबीर ने कहा है, यही स्वामी जी ने कहा है :

गुरु ने अब दीन्हा भेद अगम का।
सुरत चली तज देश भरम का॥
भटकन छूटा दहर व हरम का॥

दाता दयाल [महर्षि शिव] मुझको भेद देते थे। वह समय और था। उन्होंने सैन बैन या संकतों में वाणियों द्वारा भेद

है जिनको इस परमार्थ की असली चाह है। दूसरे नहीं आते। आ ही नहीं सकते। दूसरे मुझको इसकी आवश्तकता नहीं है कि लोग मेरे पास आयें। क्यों? क्योंकि मैं तो अपना कर्म भोगता हू। मैंने यह प्रण किया था कि अपना अनुभव बता जाऊंगा। कबीर ने भी इस शब्द में यही लिखा है कि गुरु तुमको भेद देता हैं :—

सतगुरु दरश होंय जब भाई, वे दें तुमको न म चिताई।
सुरत शब्द दोऊ भेद बताई, तब देखे अण्ड के पारा है ।।

जब तक किसी की सुरत शब्द में नहीं लगती, वह अण्ड के पार जा नहीं सकता। न अण्ड के पार जा सकता है न ब्रह्मांड के पार जा सकता है। जब तक तुम्हारी सुरत रूप रेखाओं में फंसी रहती है तुम अंड से पार नहीं जा सकते। गुरु क्या करता है? वह भेद देता है। इसलिये मैंने अपने आप को सन्त सतगुरु वक्त कहा है। मैं सत्संगों में करता क्या हूँ? पुस्तकों में क्या लिखता हूँ ससार का भेद ही तो देता हूँ। कबीर ने कह दिया कि सतगुरु भेद देता है। यदि मैं अपने आप को सतगुरु कहता हूँ तो कौन सा जुर्म करता हूँ।

सतगुरू कृपा दृष्ठि पहिचाना, अण्ड शिखर बेहद मैदाना।
सहज दास तहं रोपा थाना, जो अग्रदीप सरदारा है ।।

सतगुरू ने कृपा कर दी। क्या कृपा! यही कि उसने भेद दे दिया, असलियत बता दी कि अरे जीव! यदि तू इस माया व काल के चक्र से निकलना चाहता हैं, जन्म मरण के चक्र से बचना चाहता है जो हमेशा इसमें आता रहता है तो किसी सतगुरू की शरण लेकर रहस्य जान ले मगर इस चक्र से निकलना कोई नही चाहता। अपने दिलों से पूछिये। यह जितने खेल तुम करते हो ये क्या है? यह सब तुम्हारे मन के भाव हैं चूंकि मन के जो भाव हैं इनमें सिद्धि शक्ति है

बढ़ी हुई होती है, इसलिये यह जो प्रेमीजन या भक्तजन होते हैं उनसे जाने या अनजाने स्वयं ऋद्धि सिद्ध होती रहती है। ऋद्धि सिद्धि तो होती है जीवों की अपनी श्रद्धा, विश्वास और मन की एकाग्रता के कारण और यश (Credit) ले जाते हैं हम गुरू लोग कि हमने फूंक मार दी।

यह आवागमन का चक्र बड़ा प्रबल है। पहिले तो विश्वास नहीं था। कई बार ख्याल आया कि शायद आवागमन न हो। हिन्दुओं में यह भ्रम या मिथ्या धारणा हो, मगर स्थितियाँ बताती हैं कि यह आवागमन ठीक है। मैंने कई आदमियों की कुण्डलियाँ भृगु संहिता में से निकलवाई। उनके हालात सुने यह हरविलास यहाँ पर हैं। इनके लड़के की कुण्डली निकली जिस व्यक्ति ने निकाली वह इनका बड़ा ही प्रेमी है। फिर मैं कैसे मानूं कि भृगु संहिता से कुण्डली निकाल कर बताने वाले ने कोई धोखा किया हो। जो कुछ उसमें लिखा था वह पढ़ कर सुना दिया। उसमें लिखा था कि इसने किसी के साथ धोखा किया। उसके बदले में इसको जीवन में कष्ट हुए।

एक और लड़का जो ५-५ घण्टे अभ्यास करता है, मेरे पास आता रहता है। कम बोलने वाला है। उस ज्योतिष ने उसकी भी कुण्डली भृगु संहिता से निकाली। उसने कहा कि यह लड़का किसी समय बड़ा भारी पण्डित था। वेद शास्त्रों का ज्ञाता था। एक शिष्य को और अपने लड़के को एक मुख्य विषय की शिक्षा देता था। लड़के ने अपने बाप से कहा कि यदि सम्पूर्ण शिक्षा इस अपने शिष्य को दे दोगे तो मेरा मान घट जायेगा। मैं जो दुनियाँ में उन्नति करके यश लेना चाहता हू वह नहीं मिलेगा। वह इसके चक्र में आ गया। उसने शिष्य को सच्ची बात नहीं बताई। पूर्ण शिक्षा नहीं दी। अपने पुत्र

को दे दी। शिष्य को जब यह ज्ञात हुआ कि मुझे अधूरी शिक्षा मिली है तो वह बहुत दुखी हुआ और उस दुख में मर गया। उसके बाप का जब शरीर छूटा तो वह आकाश में या धर्मराज के पास तो उसके विरूद्ध तो कुछ था ही नहीं सिवाय उस एक बात के। तो स्वर्ग में रहने के बजाय उसको फिर खग योनि में भेजा गया कि तूने धोखा किया है। यह भृगु संहिता ने कहा। सच झूठ भगवान जानता है मगर परिस्थितियों से यह कुण्डलियाँ सैकड़ों वर्ष पहले से लिखी हुई हैं और जिन्होंने यह बनायीं उन पर हम विश्वास करते हैं कि उन्होंने कोई धोखा नहीं किया। इसलिये हम आवागमन को मानते हैं। हिन्दू ही नहीं मानते बल्कि बुद्ध भी मानते हैं, सन्त भी मानते हैं। जब हम मानते हैं तो फिर वह आदमी जो था (जो लड़का है भृगु संहिता बताता हैं वह मुसलमान हुआ और मानव चोले में आकर बगाल में जिस समय चैतन्य महाप्रभु थे, पाँच सौ वर्ष हुए वह मुसलमान था। उनके विरूद्ध रहा करता था। चैतन्य महाप्रभु उसके पास गये आरती करते हुए। पहिले तो वह भाग गया। फिर वह आया। उनकी रेडियेशन से, उसके संस्कारों से वह लड़का जो मुसलमान बना हुआ था उसके संस्कार बदले। फिर वह चैतन्य महाप्रभु के साथ सहमत हो गया। उसको मुसलमान चोले के बाद यह चोला मिला जिसमें वह इस समय है। उसमें लिखा हुआ है कि अब यह इस जन्म में अपनी कमाई पूरी करके आवागमन से बच जायेगा।

एक तो मैं ब्राह्मण, एक सन्तों के यहां आया। मैं सोचता हूँ कि उस विद्वान व्यक्ति ने एक थोड़ी सी पोलिसी की कि अपने लड़के को मान देने के लिये शिष्य को पूरी शिक्षा नहीं दी। उसका फल उसको यह भोगना पड़ा। मैं सोचता हूँ कि मैं या दूसरे गुरू लोग जो अपनी गुरूयायी के लिये, अपने मान के

लिये अपनी गद्दी के लिये शिष्य को पूरी शिक्षा नहीं देते, सच्ची बात नहीं बताते और हर बात को पर्दे में रखते हैं वह कहाँ जायेंगे ? अब इस कर्म के जाल से निकलने के लिये ताकि हमारा आवागमन का चक्र सदा के लिये समाप्त हो जाय, क्या करना पड़ता है :—

कबीर का शब्द जो ऊपर पढ़ा जा चुका है उससे प्रगट है कि जब तक बाहर का गुरू किसी को भेद नही देता कि नाम है क्या तब तक वह पार नहीं जा सकता।

सतगुरू कृपा दृष्टि पहिचाना अंड सिखर बेहद मैदाना।
सहज दास तहँ रोपा थाना, जो अग्रदीप सरदारा है ।।

जिस समय यह ज्ञान हो जाता है कि मेरा असली घर मन से परे है और जब वह मन को छोड़कर उसकी सुरत आगे चली जाती है वहाँ क्या होता है ? सुरत शान्त हुई आगे को चलती है। बेहद मैदान आ जाता है जिस तरह यह पृथ्वी बेहद मैदान है।

जिस तरह यह स्थूल देश बड़ा विस्तृत है इसी तरह से मन का देश भी बहुत विस्तृत है। इससे बढ़कर सुरत का देश है। इससे आगे और मंजिल हैं इस शब्द में। कबीर के तीन शब्द हैं :—

(१) कर नैनन दीदार महल में प्यारा है।
(२) कर नैनन दीदार वह पिंड से न्यारा है।
(३) तू सुरत नैन निहार, यह अण्ड से पारा है।

जो सब साधारण लोग हैं उनका कहा जाता है कि जो कुछ है तुम्हारे शरीर में है, उसको वहाँ ढूंढो क्योंकि वह स्थूल से ऊंचे जा नहीं सकते। जब शरीर में प्रवेश कर जाते हैं उन को कहा जाता है कि जो कुछ है तुम्हारे मन में है। इस स्थूल

देही में कुछ नहीं है। जब उनको मन का अनुभव हो जाता है तो फिर उनको कहा जाता है कि जो कुछ है सुरत में है—तू सुरत के नैन से निहार।

तुम लोग प्रेम के भाव वश आये हो। दिल्ली छोड़ी यहां आ गये। मुझ भी तकलीफ हुई दूसरे के घर में आया मगर यह प्रेम बावला होता है। किसी के वश की बात नहीं। यह मन के भाव होते हैं। जिस तरह मन के चक्कर में आया हुआ मनुष्य किसी स्त्री के मोह में फंसा हुआ उसके मिलने या उस की समीपता प्राप्त करने के लिये अपने मान या अपमान अथवा धन दौलत की परवाह नहीं करता ऐसे ही जब जीव इस रास्ते मैं चलता है मालिक की खोज में, परमार्थ के शौक में तो वह इन बातों की, दुनियाँ लबाजमात की, दुनियां क्या कहेगी, किसी को कष्ट होता है कि नहीं, देखा नहीं करता। मजनूं की कहानी सुनी होगी। मैं अपनी डयूटी समझता हूं कि आपको असली और सच्ची बात बताऊं। यदि दुनियां की वस्तुओं के लिये आये हो तो जहां हैं तुम्हारा विश्वास, वहाँ विश्वास करो। मन से विश्वास करो। जैसी तुम्हारी आशा है वैसा हो जायेगा। यदि तुम आये हो अपने घर जाने के लिये तो रास्ता मैंने आपको साफ कर दिया। क्या रास्ता है ? अपने अन्तर में शब्द को पकड़ो, नाम को पकड़ो। जीवन में कोशिश करो। भूपसिंह है मा० मोहनलाल है, मामचन्द्र है ! यदि तुमसे शब्द नहीं पकड़ा जाता, तुम ऊंचे नहीं जा सकते तो उसका इलाज यह है कि जो गुरु रूप तुम अपने अन्तर बनाते हो उसको बाबा फकीर मस्तराम का पुत्र मत समझो, उसको समझो कि वह शब्द स्वरूप है वह मालिक है। इसलिये सन्तों ने या धार्मिक के जगत के लोगों ने रोचक बातें कहकर कृष्ण को ब्रह्म का अवतार कहकर लोगों का विश्वास बैठाया ताकि जब वह

कृष्ण का ध्यान करेंगे और यदि उनको विश्वास है तो वह उस रूप को यह नहीं समझेंगे कि वह कृष्ण है जो ब्रज में पैदा हुए वह उनको ब्रह्म स्वरूप मानेंगे। इसलिये सन्तों ने कहा है :—

गुरु ब्रह्मा गुरु विष्णु गुरुर्देव महेश्वरः
गुरु साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरुवेनमः

यदि तुम अपने अन्तर में उस रूप को मानकर, वह रूप जो प्रगट होता है, उसको शब्द और प्रकाश मानकर प्रेम करोगे तो जैसी आशा वैसी वासा हो जायेगी। चूंकि तुमने उस रूप को पारब्रह्म माना है या पूर्ण शब्द माना हुआ है तुम्हारी आशा के अनुसार तुम्हारा परिणाम अच्छा हो सकता है। मुझ पर तो दातादयाल ने दया कर दी। मैं तो हद बेहद से परे चला गया। कोई चाह, कोई वासना नहीं।

चाह गई चिन्ता गई, मनुआ बे परवाह।
जिसको कुछ नहि चाहिए, वह शाहों का शाह ।।

यदि वहाँ तक नहीं पहुचा जा सकता तो गुरु स्वरूप को यह मत समझो कि जो तुम्हारे अन्तर प्रकट होता है जिसको तुम बनाते हो, चाहे किसी को बनाया हो। उस रूप को शब्द ब्रह्म मानो, पारब्रह्म समझकर तुम चलो। जहाँ तुम सच्चे होकर चलोगे तुम्हारा काम बन जायेगा। यदि भाग्य अच्छा है जीवन में शब्द और प्रकाश प्रकट हो गया है तो तुम तर गये।

तुम लोग इतना किराया भाड़ा खर्च करके आये हो। टेप-रेकार्ड लाये हो। मुझ तो अब कोई इच्छा नहीं। किसी का जी चाहे टेपरेकार्ड किसी को सुनाये, जी चाहे न सुनाये। किसी का जी चाहे मेरी पुस्तक पढ़े, जी चाहे न पढ़। क्यों ? क्योंकि यदि मैं इस आशा में रहूँ कि मेरी लिखी हुई पुस्तकें दूसरे पढ़े,

मेरा टेपरिकार्ड सुनें, मेरा नाम हो तो मैं इस भवसागर से परे नहीं जा सकता, क्योंकि मेरी आशा नाम और मान के पीछे है। किसी की आशा धन की चाह के पीछे हैं। किसी की मान के पीछे है। किसी की कोई और चाह हैं। मैंने सुबह कहा था कि तुम आये हो। मेरे पास से खाली न जाओ। अमल करना तुम्हारे हाथ है।

अब रह गया कि पहली कड़ी में है गुरु की दया। वह कहते हैं कि गुरु दया करे ! गुरु दया करे ! तुम लोगों को पता नहीं कि गुरु की दया क्या होती है।

पहिले ध्यान गुरु धारो, का सुरत निरत मन पवन चितारो
सुहेलना धुन में नाम उचारो, तब सतगुरु लहो दीदारा है।

फिर सतगुरु क्या करेगा—

सतगुरु दरस होय जब भाई, वह दें तुमको नाम चिताई,
सुरत सबद दोऊ भेद बताई, तब देखे अण्ड के पारा है ।।

सतगुरु की दया यही है कि वह सार भेद देता है तुम्हारी बुद्धि को निश्चयात्मक कर देता है। जहां तुम्हारी बुद्धि निश्चयात्मक हुई तुम्हारा काम बन जायेगा। बुद्धि का निश्चयात्मक होना एक ढंग से ही नहीं है दुनियाँ के लिये भी निश्चयात्मक होती है वह कैसे ? मीराबाई को सत्संग में सतगुरु ने यह विश्वास दिलाया हुआ था कि ठाकुर का प्रसाद अमृत होता है, विष नहीं। चूंकि उसको यह निश्चय हो गया था और जब उसको विष दिया गया उस विष ने उस पर असर नहीं किया। देखो ! मैं दिल्ली जाया करता हूँ। मैं किसी को नाम नहीं देता। सैकड़ों आदमी मेरे पीछे फिरते हैं। १०-१२ वर्ष से मैं सोचा करता था कि मैं तो किसी को नाम नहीं देता यह लोग क्यों पीछे फिरते हैं। बात मेरी समझ में आती नहीं थी। पता करने पर मालूम हुआ कि इस भ्रपसिद्ध का यह गए

विश्वास आया हुआ है तो यह मेरे पास से प्रसाद ले जाता था । कोई दुखिया इसके पास आता, यह कहता भई यह बाबा जी का प्रसाद है । यह ले फोटो । ध्यान किया कर तेरा काम हो जायेगा । उनके काम बनते रहे । तो जो काम इसने उसके साथ किया वह क्या किया ? उनको विश्वास दिलाया बस !

सेठ साहब ! आपके यहाँ सत्संग करा रहा हूँ । यह हमेशा दुनियां की बात है । वह जो अन्तिम अवस्था है वह तो कहीं भाग्य से मिलेगी । हमेशा यह विश्वास करो, यह बड़ी ऊंची रहनी है कि भगवान जो करता है, अच्छा करता है । जो होगा सो भला होगा । वह तुम्हारे लिये अच्छा करता है ।

जो करिहे सो भला ।

तो जो यह तुम्हारी बुद्धि निश्चयात्मक हुई है इसको वजह से वह तुम्हारे लिये सुखदायक होगी, दुखदायक नहीं होगी । एक निश्चयात्मक बुद्धि है परमार्थ की ।

नाम की अवस्था बहुत ऊंची है उसको तो दुनियाँ वालों को या आप लोगों को आवश्यकता नहीं । आप गृहस्थी हैं तो कम से कम इतना करो कि अपनी बुद्धि को निश्चयात्मक कर लो । यह जो कुछ तुम्हारे लिये होगा वह ठीक होगा । इससे नीचे कोई काम करना हो तो यह सोचकर नहीं करना कि खराब न हो जाय हमेशा यह सोचना कि हम जिस काम का हाथ लगाते हैं हम सफल हो जायेंगे । आपको यह शब्द कहे जाता हूँ ।

चूंकि मनुष्य का मन बड़ा निर्बल है वह अपने आप पर विश्वास नहीं रख सकता, इसलिये जो भी तुम्हारा इष्ट है— राम का, कृष्ण का, भगवान का अथवा गुरु का, सदा यह निश्चय रक्खो, यह विश्वास करो कि वह तुम्हारा काम ठीक

कर देगा। बस कुंजी मैंने आपको बता दी। अमल करना या न करना तुम्हारा काम है। आशावादी होकर रहो। कभी न सोचो कि यह बिगड़ जायेगा। मैं क्या करता हूं ? लोग कहते हैं—बाबा जी ! तुम कह दो ! हमारा काम हो जायेगा। यदि मैं कह देता हूँ उनका विश्वास होता है उनका काम हो जाता है। यह जितना खेल है यह सब तुम्हारे विश्वास का फल है। परमार्थ और वस्तु है। वह तो विशेष गिने चुने व्यक्ति निकलते है। हजारों में दो चार होते है, जिनकी यह इच्छा है कि हम आवागमन से बच जायगे।

मै चाहता हूँ कि आपका भला हो। इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं चाहता। गुरु है ही वही। गुरु भेद देता है। गुरु तुम्हारी बुद्धि को एक प्रकार का विश्वास देता है। गुरु का काम ही यही है कि दूसरे को एक बात पूर्ण निश्चय करा दे।

—x—

शब्द

'कोई बात न सुनता मेरी'

निज मन से कोई करे न सुमिरन, करते हेरा फेरी कोई०
सुरत पड़ी वश काल के आकर, गऊ सिंह ने घेरी कोई०
मोह माया में जीव फसे हैं, करे न कोई दिलेरी कोई०
दुर्लभ जन्म मिला तो फिर भी, चलती काम अंधेरी कोई०
बड़े भाग्य हों सन्त मिले कोई, जिनकी माया चेरी कोई०
बिन गुरु पार लगाये केड़ा, भंवर पड़ा है बेड़ा कोई०
बार-बार यह समयन मिलता, चाल चले क्यों टेढ़ी कोई०
सर पर काल गरजता हरदम, जल्दी करो न देरी कोई०
'गाफिल' अपना आप पहचानो, छोड़ो मेरी तेरी कोई०

—गाफिल शब्दावली से

,,मनुष्य बनो" (हिन्दी मासिक पत्र) समाचार पत्र (केन्द्रीय) अधिनियम १९५६ नियम ८ फार्म ४ के अनुसार अपेक्षित आवश्यक सूचना

१—प्रकाशन का स्थान	:	अलीगढ़
२—प्रकाशन अवधि	:	मासिक
३—मुद्रक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
क—राष्ट्रीयता	:	भारतीय
ख—पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़।
४—प्रकाशक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़ ।
५—सम्पादक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
राष्ट्रीयता	:	भारतीय
पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़ ।
६—स्वत्वाधिकारी	:	श्रीमती सुधा मीतल
संरक्षक	:	परमदयाल फकीरचन्द्र जी महाराज

७—मैं सुधा मीतल घोषित करती हूं कि उपर्युक्त विवरण मेरी जानकारी और विवरण के अनुसार सही है।

दिनांक १५ नव०, १९८८

सुधा मित्तल

प्रकाशक के हस्ताक्षर

Regd. NO L—ALG.28

मिलने का पता :—

'मनुष्य बनो' कार्यालय

शिव भवन, लेखराज नगर

अलीगढ़—२०२००१ (उ०

अवैतनिक सहायक सम्पादक

महेशचन्द्र मीतल

सम्पादक, व्यवस्थापक व प्रकाशक

श्रीमती सुधा मीतल

ग्राहक संख्या— 170

श्रीमान Sri Chilwar Narsimhlu

Book - Seller

V & PO. Banswada. mandal

Nizamabad. A.P.

503187